UNIVERSAL LIBRARY
OU_178764
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H88/T16R Accession No. H2441

Author टंडन, रामचंद्र।

Title रेणु।

This book should be returned on or before the date last marked below.

रेणु

रेणु

रामचंद्र टंडन

राजपाल एण्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य : दो रुपया

प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली
मुद्रक : इंडियाप्रिंटर्स, दिल्ली

अपनी प्रिय सहचरी
को
सस्नेह

दो शब्द

कई वर्ष हुए साहित्य-सदन, चिरगाँव (झाँसी) से इस पुस्तक का प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ था और अनुपलब्ध था। प्रकाशकों ने मुझे उसके पुनः प्रकाशन की अनुमति दी है, इसलिए मै उनका आभारी हूँ। इस नए संस्करण में मैंने कुछ और विचार जोड़ दिए है। इन विचारों को अवकाश के क्षणों मे टाँक लेने में मुझे सुख मिला है। पाठकों को कहीं कोई विचार प्रीतिकर हुए तो लेखक के लिए इतना पर्याप्त होगा।

लेखक

१

बड़े लोगों का संचय मधुमक्खियों के संचय की भाँति है, वह केवल दूसरों के निमित्त होना है।

२

पिजरबद्ध पक्षी कहता है : 'पिजरे में बद रहकर मै उड़ना भूल गया हूँ। यदि मै गीत गाता हूँ तो वह केवल इसलिए है कि मैं अपनी वाणी भी न भूल जाऊँ, अपने पकड़ने वालों को प्रसन्न करने के लिए नही।'

३

यदि यह सत्य है कि हम सब एक ही पिता के पुत्र हैं तो कौन मनुष्य अपनी विशेष कुलीनता का गर्व कर सकता है ?

४

ख्याति कवि की भयभीत भार्या है; कल्पना उसकी ढीठ सहचरी ।

५

रहस्य में रहस्य निहित है ।
फूल की कोख में बीज है, बीज की कोख में फूल ।

६

मध्याह्न का सूर्य अपने ताप की सीमा को छू लेता है । उसी समय उसके पतन का आरम्भ हो जाता है ।

७

न्यायाधीश अपराधी को दंड देकर उसका अपराध अपने सिर पर ले लेता है ।

८

गिरती हुई पत्ती कहती है : 'दूर हट जा, रे वृक्ष !'

९

बीज ने कहा : 'मेरी कोख में एक विशाल वृक्ष छिपा हुआ है। जब मैं इसे जन्म दे लूँगा तब नष्ट हो जाऊँगा।'

१०

जिस प्रकार कोई बालक अपने फूटे हुए खिलौने को हृदय से लगाए रहता है, उसी प्रकार, हे मेरे स्वामी ! मै अपनी आहत आकांक्षाओं को हृदय से लगाए रहता हूँ।

११

बहुरूपिया अपने पेट के लिए क्या-क्या स्वाँग भरता है।

मेरी वाणी तेरी आराधना में, कैसे-कैसे शब्दों की भूषा से अपने को सजा ती ।

१२

कौआ कोयल से कहता है : 'तेरा स्वर बड़ा कर्कश है।' कोयल अवाक् रह जाती है। फिर मीठे स्वर में उत्तर देती है : 'तुम सच कहते हो।'

१३

इस संसार की नाट्यशाला में, एक स्थान मेरे लिए भी रिक्त है। परन्तु नाटक मेरे आने की प्रतीक्षा में रुका न रहेगा।

१४

गर्विता समझती है कि वन के पुष्प उसके आभूषणों की नक़ल करते हैं।

१५

वह कौन-सा स्थल है जहाँ पर अस्ताचल का सूर्य उदय होने वाले सूर्य को अपने गले लगाता है ?

वह कौन-सी वेला है जब मृत्यु पुनर्जन्म से भेंट करती है ?

१६

'हे चित्रकार, तू मानस के किस भण्डार में ऐसी-ऐसी सुन्दर कल्पनाएँ संचित किए हुए है ?'

'मेरा मानस उस स्वच्छ और निस्तब्ध सरोवर की भाँति है, जो उड़ते हुए बादलों का प्रतिबिंब ग्रहण करता है और तत्काल ही उसे तट पर बैठे हुए श्रांत पथिकों को अर्पित कर देता है।'

१७

कवि की विशेष मूल्यवान् कल्पनाएँ वे हैं जिन्हें वह शब्दों में बंद नहीं कर सका है।

१८

घृणा प्रेम का ही विकृत रूप है।

१९

मुझे उस दर्पण की खोज है जिसमें मैं अपनी आत्मा का प्रतिबिंब देख सकूँ।

२०

मृत्यु दबे पाँव आती है, जन्म कोलाहल करता हुआ।

२१

पतन में उत्थान का रहस्य निहित है।

गेंद का उछलना पृथ्वी पर पटके जाने के कारण है।

२२

कल्पना की गोद में मुझे अपना सिर रखकर सो जाने दो। मैं एक ऐसे संसार में जागृत होना चाहता हूँ, प्रस्तुत संसार जिसका प्रतिबिंब है।

२३

एक दीन की ठंडी आह में सौ भट्टियों की आँच है।

२४

मिट्टी का दीपक घर के उन अँधेरे कोनों में प्रकाश पहुँचाता है, जहाँ चन्द्रकला प्रवेश नहीं पा सकती।

२५

दीनों की वेदना समर्थों के उत्सवों का उपहास करती है।

२६

अन्यायी की शांति-कामना, बन्ध्या की सन्तान-कामना के सदृश है।

२७

पुरुष कहता है : 'तू मुझे पार लगाने वाली तरणी है ।'

स्त्री कहती है : 'और तू मेरा कुशल खेवैया है ।'

पुरुष के प्रेम में स्त्री की परिपूर्णता है, इसे प्रमाणित करने के लिए किसी न किसी समय प्रत्येक स्त्री किसी न किसी पुरुष को अपना हृदय दे डालती है।

२९

बिदा हुए अतिथि के ध्यान में इतने न निमग्न हो जाओ कि उपस्थित अतिथि के सत्कार में त्रुटि हो जाय।

३०

पृथ्वी के पुष्पालंकृत यौवन को देखकर अपने नेत्रों को सफल करने की लालसा से शीतकाल दबे पाँव वसंत के समीप आता है।

३१

हे दूसरों के उद्यानों को सुरम्य बनाने के प्रयत्न में रत मित्र, क्या तुम्हें इस बात की ख़बर है कि तुम्हारे खेतों में घास उग रही है ?

३२

ईश्वर आज उस प्रेमी मित्र की प्रतीक्षा में उदास है जो मार्ग में थककर बैठ गया है ।

३३

सच्ची विजय आत्म-बलिदान द्वारा प्राप्त होती है ।

३४

वर्षा-काल की संध्या के आकाश में बिजली की चमक उस हँस पड़ने वाले बालक के दाँतों की चमक की भाँति है, जिसके गालों पर अभी आँसू की बूँदें सूखी नहीं हैं ।

३५

मैं उन मुट्ठी भर फूलों के भाग्य की सराहना कर रहा हूँ, जिनसे अज्ञात-यौवना बाला अपने वक्षस्थल को अलंकृत कर रही है।

३६

मैं कहाँ से आया हूँ—यह मैं नहीं जानता। कहाँ जाऊँगा—इसकी भी चिंता नहीं है। मुझे इसी में संतोष है कि तू मेरे समीप है।

३७

हम पापियों के लिए भविष्य सुरक्षित है।

३८

प्रभात उस अदृश्य वृक्ष का सुन्दर पुष्प है जिसकी परिपक्वता संध्या के सुनहले फल में है।

३९

तेरी अनुकंपा लजीली बहू की भाँति मेरे पास उस समय आती है जब कोई और निकट नहीं होता।

४०

खँडहर अपने अतीत का उपहास करता है ।

४१

रमणी, तेरे अश्रुओं में वह कौन-सी शक्ति है जो पत्थर को भी पिघला सकती है ।

४२

कायर के हृदय की उमंगों की भाँति पीली पत्ती आकाश से इतराती हुई पृथ्वी पर गिर जाती है ।

४३

आज की संध्या का आकाश बिना जलाए गए दीपक के प्रेम में विह्वल है ।

४४

जलशून्य बादल अपने को विविध रंगों से सजाता है । जलपूर्ण बादल का रंग धूमिल है ।

४५

यदि तुम आकाश की ओर निहारते चलोगे तो मार्ग में ठोकर खाकर तुम्हारे गिर जाने का भय है।

४६

तितली पुष्प से रंग की याचना करती है, मधुमक्खी उसके रस की भिक्षुक है।

तितली अपने शृंगार से जग को विमोहित करना चाहती है, मधुमक्खी उसकी सेवा करने की इच्छा को हृदय में छिपाए हुए है।

४७

हमारा जीवन-पात्र अहंकार के जल से परिपूर्ण है, उसमें तेरी अनुकंपा के अमृत के लिए स्थान नहीं है।

४८

तुच्छ धूल को यदि पैर के नीचे कुचलोगे तो वह भी तुम्हारे ऊपर उड़कर तुम्हारे रंग को विकृत कर देगी।

४९

हे स्त्री, ईश्वर ने अपने प्रेम और सौंदर्य का संदेश भेजने के लिए तेरी रचना की है।

५०

हे कुमारी, तेरे करुण नेत्र एक पर्वतीय सरोवर के सदृश हैं। मेरी आत्मा उसमें स्नान करके पवित्र होना चाहती है।

५१

कार्य के अनंतर विश्राम है, जागरण के अनंतर निद्रा। इसी प्रकार जीवन के अनंतर मृत्यु है।

५२

उद्यान का पुष्प दंभी राजा के गले का हार बनने के लिए अपने हृदय को विदीर्ण होने देता है।

वन का अज्ञात फूल अपनी मंद सुरभि से तेरे चरणों को छू लेने में संतुष्ट है।

५३

अन्य देशों की यात्रा से लौटे हुए मेरे विचार मुझ-से ही पूछते हैं कि 'मैं कौन हूँ ?'

५४

कलाविदों की एक जाति ही भिन्न है।

५५

जिस समय मैं तेरी बराबरी करने का दावा करता हूँ, उस समय मेरी तुच्छता अपना विशाल रूप धारण करके मेरे सम्मुख आकर खड़ी हो जाती है।

५६

हमारा जीवन-रूपी वृक्ष, वेदना के अश्रुओं से सिंचित होकर आनन्द के पुष्पों को विकसित करता है।

५७

तेरे नेत्रों में मेरा प्रतिबिंब है। हे मेरे प्रेमी, मैं देखता हूँ कि इस प्रतिबिंब के भीतर फिर तेरा ही प्रतिबिंब है।

५८

जिस प्रकार बालक अपनी छोटी मुट्ठियों में उड़ते हुए धुएँ को पकड़कर अपनी माता के अंचल में बंद करता है और माता प्रसन्न होती है, उसी प्रकार, हे मेरे ईश्वर, मैं अपनी नश्वर कृतियों को अपनी मुट्ठियों में ग्रहण करके तेरे चरणों पर भेंट करता हूँ और तू उन्हें देखकर प्रसन्न होता है।

५९

तुझसे भय खाकर मैं अपराध करता हूँ।

तेरी क्षमा में विश्वास रखते हुए मैं अपराधों से दूर रहता हूँ।

६०

नारियल के फल ने मनुष्य से कहा : 'तुम मेरा सिर फोड़ते हो परन्तु मैं तुम्हें स्वादिष्ट मेवा खिलाता हूँ।'

कृतघ्न मनुष्य ने उत्तर दिया : 'हाँ, जो तुम्हारा सिर न फोड़ता तो तुम ऐसा क्यों करते ?'

६१

जिस समय सभी बोलने का प्रयत्न करते हैं उस समय कोई भी सुन नहीं पाता ।

६२

हमें अपनी अंतिम यात्रा के लिए आडंबरपूर्ण तैयारी करने की आवश्यकता नहीं होती ।

६३

असफल लेखक तीव्र समालोचक बन जाता है ।

६४

भिखारिणी तृष्णा को मैं घर के बाहर की दहलीज में आश्रय देता हूँ ।

कुछ ही काल के अनंतर वह मेरे घर की स्वामिनी बन जाती है ।

६५

शंका के गर्भ से ज्ञान का जन्म होता है।

६६

हमारी भूलें हमारी सबसे बड़ी शिक्षिकाएँ हैं।

६७

मैं कभी यह विचार करने लगता हूँ कि मुझे अपना बेटा संसार के सभी सुन्दर बालकों से अधिक प्यारा क्यों जान पड़ता है ?

६८

ईश्वर सर्वत्र उपस्थित है, इसलिए वह कहीं नहीं दिखाई देता।

६९

जितना प्रयत्न हम भला प्रकट होने के लिए करते हैं उसका आधा प्रयत्न भी हम भला बनने के लिए नहीं करते।

७०

हम उद्‌गार की याचना के लिए मौन के द्वार पर जाते हैं।

७१

भिखारी ने स्वप्न देखा कि वह राजा है; उसके द्वार पर भिखारियों की भीड़ लगी हुई है। वह भौं चढ़ाकर अपने सेवकों से बोला, 'इन्हें दूर करो।'

इतने में उसकी आँखें खुल गई।

७२

जिस समय बलशाली प्रेमपूर्वक उपदेश दें उस समय दुर्बलों को अपनी रक्षा का उपाय सोचना चाहिये।

७३

प्रशंसा पाने के लिए उत्सुक मेरा हृदय तुमसे केवल सम्मति की याचना करता है।

७४

स्वतंत्रता आत्म-सम्मान की बड़ी बेटी है।

७५

ईश्वर हमारे अत्यंत निकट है। उच्च स्वर में की गई हमारी प्रार्थना उसे व्यर्थ की झंकार प्रतीत होती है।

७६

एक धृष्ट कहता है : 'मैं अपनी फूस की छोटी कुटिया में बैठकर तेरी उपासना करूँगा। तेरे मंदिर की विशालता अपनी सुन्दरता द्वारा मेरी उपासना में बाधक होती है।'

ईश्वर इस धृष्टता से प्रसन्न होता है।

७७

जिस प्रकार एक शराबी नशे में किए हुए अपने कृत्यों को स्वीकार करने में संकोच करता है, उसी प्रकार मैं अपने अज्ञान को स्वीकार करने में संकोच करता हूँ।

७८

सत्य बिना प्रकट हुए नहीं रह सकता।

७९

छोटों की धृष्टता सहन करने में ही बड़ों का बड़प्पन है।

८०

जो मनुष्य रास्ता भूलकर भटक रहा है वह ठीक मार्ग भी पा लेगा। परन्तु जो अपने स्थान से चला ही नहीं है उसके विषय में क्या कहा जा सकता है ?

८१

घड़ी को तोड़ डालने से समय की गति नहीं रुक सकती।

८२

मैं जीवन की नश्वरता पर विचार करूँ कि मनुष्य के अमरत्व पर।

८३

मनुष्य की सामर्थ्य कल्पना के छोर तक पहुँची है।

८४

दुःख की संभावना हमें दुःख से अधिक दुखदायी प्रतीत होती है।

८५

मैं क्या जानता था कि मेरा परीक्षक मेरे पास अतिथि के रूप में आयेगा।

८६

मिलन का सुख वियोग में है।

८७

ज्ञानोपार्जन में विस्मृति उतनी ही सहायक होती है जितनी कि स्मृति।

८८

चाटुकारिता अपने ऊपर लज्जित होना नहीं जानती।

८९

तेरी दया का दंड सब दंडों से कठोर है।

९०

मूर्ख अपनी बुद्धि की सराहना चाहता है, गँवार अपनी शिष्टता की।

९१

यदि मनुष्य को मूर्ख बनाना चाहते हो तो उसकी प्रशंसा करो। कायर भी अपने को सहज में शूर समझ लेगा।

९२

हृदय की दरिद्रता सबसे बड़ी दरिद्रता है।

९३

हम तीन भाई हैं। मेरा बड़ा भाई अपनी अटारी पर खड़ा होकर द्वार पर खड़े हुए भिक्षुक के फैलाए हुए वस्त्र में एक मुट्ठी अन्न डालकर गर्व-पूर्वक एक दृष्टि चारों ओर डालता है। मेरा छोटा भाई उसी भिक्षुक को अपने घर के एकांत कोने में ले जाकर उसे अपना सर्वोत्तम भोजन सादर खिला देता है।

मैं अपने दोनों भाइयों के कृत्यों पर विचार करने लगता हूँ।

९४

उस मुरझाए हुए फूल की सुरभि भी प्रेमी के हृदय को मत्त कर देती है ।

९५

स्मृति पीछे दृष्टि डालती है; आशा आगे ।

९६

परतंत्रता की बेड़ी, चाहे सोने की हो, कष्टकर है ।

९७

बबूल के बीज बोने वाला बेल के फल की इच्छा करे तो हम उसे क्या कहेंगे ?

९८

अपार दुःख में भी सांत्वना है ।

९९

हम सब नौका के यात्री हैं। जब तक हम यह नहीं जानते कि उस अलक्षित तट के किस स्थल पर हमारी नाव लगेगी तब तक हम घबराते हैं।

जब हमें तट स्पष्ट दिखाई देने लगता है तब हमारी घबराहट उत्सुकता में परिवर्तित हो जाती है।

१००

हे ईश्वर, यह क्या बात है कि जिनके पास थोड़ा है वे संतुष्ट हैं, जिनको बहुत कुछ प्राप्त है उनकी लालसा अतृप्त है ?

१०१

हमारी दीपावली आकाश की तारकावली का उपहास करती है।

आकाश के सुनहरे-रुपहरे नक्षत्र हमारे बुझते हुए दीपकों को देखकर मनमें मुसकराते हैं।

१०२

प्रकाश अंधकार का पीछा करता है, परन्तु अपने पीछे अंधकार छोड़ जाता है।

१०३

धनी कहता है : 'मैं संसार के दूसरे छोर से धन खींचकर अपने कोष को भरूँगा।'

दीन कहता है : 'मुझे संध्या के भोजन की चिंता है।'

१०४

इस सुहावने उषाकाल में प्रकाश रात्रि के ठंडे होठों का चुंबन करके उसे बिदा करता है।

१०५

सौंदर्य वह है जिसे निरंतर लखकर भी आत्मा अतृप्त रहती है।

१०६

स्त्री कहती है : 'तुम्हारे भार को मैं बँटा सकूँ, यही मेरी सबसे महती आकांक्षा है।'

१०७

हे भगवन्, तेरा प्रभात आशा का नव-संदेश लेकर नित्य हमारे सम्मुख उपस्थित होता है।

१०८

यदि महल में रहने वाले राजा के शरीर में गर्म रक्त है, तो कुटज के रहने वाले दीन की नसों में भी ठंडा पानी नही संचारित हो रहा है।

१०९

जहाँ प्रेम का अभाव है अथवा जहाँ प्रेम का बाहुल्य है, वहाँ बहुत छोटी बाते भी प्रचंड कलह का कारण बन जाती है।

११०

अनंतकाल का मौन हमारी यश-कामना का उपहास करता है।

१११

हमारे माथे का पसीना सूख जाता है।

परन्तु हमारा परिश्रम हमारे अस्तित्व का एक अंग बन जाता है।

११२

'हाँ' और 'नहीं' इन दो शब्दों का उचित उपयोग मनुष्य के जीवन में एक स्पृहणीय क्रांति उपस्थित कर सकता है।

११३

इस संसार में भावी का उपहास करने वाले मनुष्य बहुधा भाग्यशाली होते हुए देखे गए हैं—इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है।

११४

अपना राज्य गवाँ कर यदि राजा अनुभव भी न प्राप्त करे तो उस राजा के विषय में हम क्या कह सकते हैं?

११५

प्यासा कहता है : 'मैं खारे पानी से ही संतुष्ट हो जाऊँगा।'

जिसे प्यास नहीं है वह मीठा शीतल जल भी धरती पर उँड़ेल देता है।

११६

सफलता का रहस्य विफलता में निहित है ।

११७

जिस किसीने भी दुःख का अनुभव किया है वह अपने अनुभव को दूसरे के अनुभव की अपेक्षा कठिनतर बताता है ।

११८

यात्रा के समय हम अपने दुःखों को भूल जाते हैं ।

जिस समय आँखें नई-नई वस्तुओं को देखने में लगी रहती हैं उस समय मन को आत्मचिंतन का अवसर नहीं मिलता ।

११९

इस रक्तमयी संध्या के निस्तब्ध आकाश में अपने साथियों से बिछुड़े हुए बालपक्षी की भाँति मेरी आत्मा आज एक रहस्यपूर्ण निर्जनता का अनुभव कर रही है ।

१२०

यह संध्या-तारा आकाश का रक्तपुष्प है।

१२१

अर्धनिशा की गहन निस्तब्धता में, इस रमणीय वन्य सरोवर में अपने प्रतिबिंबों को देखने की इच्छा से आकाश में तारागण एकत्र हुए है।

१२२

प्रत्येक यातना के अनन्तर आश्वासन है। हमारी यातना ही उसका मूल्य है और यह मूल्य कदापि अधिक नही है।

१२३

युवक ने बुड्ढे से कहा : 'तुम बिना बोझ के ही झुके जाते हो।'

बुड्ढे ने उत्तर दिया : 'तुम्हारी आँखे कहाँ हैं? इतना भी नही देख सकते कि मेरी पीठ पर आयु का बोझ लदा हुआ है।'

१२४

आत्मशासन सब शासनों मे कठिन है ।

१२५

जो यह पूछता है कि, 'मै कल क्या करूँगा ?' उसे तुम आज का काम बताओ, क्योंकि निश्चय ही उसके पास आज भी कोई काम नही है ।

१२६

कौन कह सकता है कि चिडियों के संगीत अर्थ-विहीन हैं ।

१२७

कलिका ने कहा; 'मैं विकसित होना चाहती हूँ ।

मृत्यु बोली : 'मै तुम्हारी प्रतीक्षा में चिरकाल से बैठी हूँ ।'

१२८

चिड़ियों के संगीत पर आकाश में वृक्षों की पत्तियाँ नर्तन करती हैं।

इस साज को लखकर आज का प्रभात मुदित है।

१२९

हे चन्द्र, क्या तेरी माता ने तुझे संसार की दीठ से बचाने के लिए तेरे मुख पर काजल का डिठौना लगा दिया है?

१३०

हमारी यात्रा का अंतस्थल अपना ही घर है।

१३१

जिस मनुष्य का उत्साह दूध के उफान की भाँति है वह मनुष्य संसार में क्या कर सकता है?

१३२

सीढ़ी का कोई पग भी अनावश्यक नहीं।

१३३

हमारी मृत्यु पानी की उस लकीर की भाँति है जिसे संध्या की अरुणिमा में सरिता-तट पर बैठा हुआ कोई अज्ञात बालक जल में बनाता है।

१३४

सांसारिक कोलाहल मेरे लिए एक विराट् शांति है जिसमें मैं केवल अपने हृदय की धड़कन सुन रहा हूँ।

१३५

मेरे प्रेमी का हृदय तूफ़ान के अनंतर आने वाली शांति में प्रस्फुटित होनेवाली कलिका की भाँति सुन्दर है।

१३६

क्या मैं नहीं जानता कि संसार असार है ? परन्तु हे मेरे अभिनायक, मैं वह सभी खेल खेलने के लिए प्रस्तुत हूँ जिनसे तू प्रसन्न हो।

१३७

वह वस्तु कौन-सी है जिसका दूसरों को देना सहज है, परन्तु स्वयं ग्रहण करना कठिन है ?

—उपदेश ।

१३८

करुणा वह स्त्री है, जिसके गालों पर आँसू की बूँदें कभी सूखती नहीं।

१३९

भाग्य द्वारा कुचले हुए मनुष्यों के पीछे लाठी लेकर टूट पड़ने वालों की संख्या अनगिनत है ।

१४०

ईश्वर विशाल मन्दिर में तेरी ललित शब्दावली-पूर्ण प्रार्थना पर ध्यान कैसे दे सकता है ?

उसका ध्यान तेरे द्वार पर खड़े हुए, अपने पेट पर हाथ रक्खे हुए भिक्षुक की ओर लगा हुआ है ।

१४१

जोंक जिस समय विकार-युक्त रक्त पी लेती है, उस समय यदि हटाई न जाय तो हमारा अच्छा रक्त भी अवश्य चूस लेगी।

१४२

कायर और दलित आलोचना सहन नहीं कर सकते।

१४३

सरलता धूर्तता पर विजय पा जाती है, परन्तु धूर्तता अपने ऊपर लज्जित होना नहीं जानती।

१४४

शब्दों के आडम्बरपूर्ण आवरण में अर्थ ऐसा छिप जाता है कि हम उसे पहचान नहीं पाते।

१४५

विनय मनुष्य को ऊपर उठाता है।
गर्व मनुष्य को नीचे गिराता है।

१४६

हे गर्विते, तू जिस यौवन का घमंड करती है, वह तेरे संतप्तों के अश्रुओं के साथ ढल जायगा।

१४७

बुढ़िया का शृंगार उसे छोड़ कर दूसरे को धोखे में नहीं डाल सकता।

१४८

अश्रुपूर्ण नेत्रों से हम ईश्वर का दर्शन नहीं कर सकते।

१४९

हम अपने बंधन में भी स्वतन्त्रता से घिरे हुए हैं; परन्तु उनकी स्वतन्त्रता बंधन-रहित नहीं है।

१५०

जल में पड़ी हुई चन्द्रमा की परछाईं को बालक चन्द्रमा समझता है। हम मुस्कराते हैं।

हमें देखकर हमारा ईश्वर भी मुस्कराता है।

१५१

छोटे चोर दंड पाते हैं; बड़े चोर यश कमाते हैं ।

१५२

काल सबसे बड़ा अपहरणकर्ता है ।

१५३

ह ईश्वर, मेरे हृदय में उस प्रदेश का नागरिक बनने की आकांक्षा है जहां के लोगों को समय पर वश प्राप्त है ।

१५४

सघन वृक्ष अपनी छाया से अतिथि का सत्कार करते हैं ।

१५५

धनी अपनी यात्रा की आडंबरपूर्ण तैयारी में लगे रहते हैं। उनका धन-हीन साथी उन्हें मार्ग में बहुत पीछे छोड़ देता है ।

१५६

मैं उस धर्म का उपासक हूँ जो सनातन है ।

मेरा उस ईश्वर में विश्वास है जो अनादि, अनंत, अखंड, अछेद और अभेद है ।

१५७

श्रीमानों का दीनों को संतोष का उपदेश देना उनका महत्तम अपमान करना है ।

१५८

अंध-विश्वास से संदेह बड़ा है ।

विश्वास संदेह से महत्तर है ।

१५९

हमारे विचार पवन की पीठ पर सवार होकर उस लोक में पहुँचते है जिसका निर्माण हो रहा है और उसके निर्माण में सहायता देते है ।

१६०

हमारी आकाक्षाएं हमारे भविष्य का निर्माण करती है, हमारी कृतियाँ नही ।

१६१

मनुष्य के मस्तिष्क की रेखाओं में उसका भविष्य लिखा है । पुष्प की पंखड़ियों की रेखा में उसका प्रेम खचित है ।

१६२

मेरी वाणी तेरे शब्दों के अनुकरण मे अपनी शून्यता का अनुभव करती है ।

१६३

अपने उद्‌गार के अनुसंधान में मै अपने शब्दो को भेजता हूँ । जिस समय हमें उद्‌गार प्राप्त हो जायगा इन शब्दो का कोई काम न रह जायगा ।

१६४

मेरे सहज में न प्रसन्न होने वाले देव, तुम्हें प्रसन्न करने के लिए मैं अपने प्राणों का उत्सर्ग करूँगा।

१६५

मेरा हृदय तेरी संपूर्ण अनुकंपा को उसी प्रकार ग्रहण नहीं कर सकता है जिस प्रकार कि पनिहारिन का छोटा घड़ा उस मनोहर जल-प्रपात के संपूर्ण जल को।

१६६

मैं अपनी यात्रा के अन्त में तेरे समीप पहुँचने के विचार से इतना उत्तेजित हो गया हूँ, कि मार्ग के पुष्पों की ओर ध्यान नहीं देता—मैं भूल जाता हूँ कि तेरे चरणों पर किन पुष्पों की भेंट चढ़ाऊँगा।

क्या तू मुझे इनको लाने के लिए फिर लौटाएगा ?

१६७

मार्ग में खिलने वाले पुष्पों में आनंद लेने में हमारी यात्रा का भार दूर हो जाता है और अन्त सहज।

१६८

हम अपने दिवसों को व्यर्थ बिताएँगे तो हमें अपना प्रस्थान बहुत कष्टप्रद प्रतीत होगा।

१६९

तेरी अनुकंपा मुझे सौ परदों के भीतर खोज लेती है।

१७०

हे पृथ्वी, क्या तू मेरा इसी लिए परित्याग कर देगी कि मैं पाप-पंक से अवलिप्त हूँ? माता अपने धूल में सने हुए बालक को क्या और अधिक प्यार नहीं करती?

१७१

तेरा मौन वर्षा की रात्रि में झिल्ली की झङ्कार की भाँति जन-समूह के कोलाहल का हृदय विदीर्ण करता है।

१७२

अपनी निर्जन कुटी में, दीपक जलाकर, उसके द्वार पर बैठा हुआ मै अंधकार में तेरी प्रतीक्षा करता हूँ।

मेरी आँख लग जाती है, तू इसी बीच में आता है और उदास होकर लौट जाता है।

१७३

हमारा स्वप्न उस समय टूट जाता है, जब हम जानते है कि हम स्वप्न देख रहे है।

१७४

ईश्वर, हमें अपने भविष्य मे विश्वास होवे।

१७५

हमारे अर्तांहित विचारों को अज्ञात रूप से चुराकर कवि उन पर अपने शब्दों का आवरण डाल देता है।

हम उनसे अपनी आत्मीयता प्रकट करने में असमर्थ हो जाते है।

१७६

हमारी स्थिति संध्या समय सरिता-तट पर विसर्जित किए गए दीपकों की भाँति है।

पवन हमें अपने संगियों से विलग कर देता है। फिर थपेड़ों से हमारी ज्योति बुझा देता है। हम बिना कोई चिह्न छोड़े हुए अन्धकार में कवलित हो जाते हैं।

१७७

मृत्यु वैद्यराज की वह गोली है जो कड़वी तो मालूम पड़ती है, परन्तु हमें एक नया जीवन प्रदान करती है।

१७८

अनन्त के आकाश में उड़ने वाले मेरे हृदय रूपी पतंग की डोर, हे प्रेमी, तू अपने कुशल करों में ले ले।

१७९

हमारे हृदय के प्रदीप में स्नेह का तेल जलता है। जिस समय तेल समाप्त हो जायगा, दीपक बुझ जायगा।

१८०

शिकारी दिन भर हिरन का पीछा करता है। सन्ध्या हो जाती है। उसके अनन्तर अंधेरी निशा अपनी कोमल गोद में भयभीत हिरन का और क्रुद्ध शिकारी का एक ही भाव से मुख ढाँक लेती है।

१८१

उस्ताद अपनी सभी पेंचे सिखा देता है, केवल एक पेंच नही सिखाता। इस पेंच का वह उस समय उपयोग करता है जब कि शागिर्द उस्ताद को स्वयं उसीके बताए पेंचों से परास्त करने का प्रयत्न करता है।

१८२

मिट्टी का दीपक बुझते समय एक बार विशेष प्रकाश से प्रज्वलित हो उठता है।

१८३

तरुणी मिट्टी के दीपक को अपने अंचल से बुझा देती है। वह एक बार उत्तेजित होता है, फिर धूम्र की एक महीन रेखा उच्छ्वास-रूप में छोड़कर ठंडा पड जाता है।

१८४

पुष्प का पराग हवा में उड़कर अपने आप को धरती माता पर निछावर कर देता है।

१८५

छूछा घड़ा बड़ा शब्द करता है। परिपूर्ण घट गंभीर है। असत्य कोलाहल करता है, सत्य मौन है।

१८६

मृत्यु की सरिता में स्नान करके, हमारी आत्मा अपना शरीर रूपी वस्त्र बदल डालती है।

१८७

लेखनी काग़ज़ पर काली-काली टेढ़ी रेखाएँ उगल रही हैं। क्या इसीको तुम प्रेम का संदेश कहते हो ?

मेरे प्रेमी का संदेश, प्रभात काल में, चमकते हुए ओस-बिंदुओं में, समस्त पृथ्वी पर अंकित रहता है।

१८८

राजा के महल में बिजली का प्रकाश उसके बाहुल्य को उजागर कर रहा है।

रंक की कुटिया में, मिट्टी के दीपक की ज्योति उसकी दरिद्रता पर आवरण डाले हुए है।

१८९

बालक पूछता है : 'इन्द्र-धनुष के दोनों छोर धरती में कहाँ गड़े हुए है?'

ज्ञानी उत्तर देता है : 'यह इन्द्र-धनुष तो आकाश में वर्षा के अतिशय नन्हें बिंदुओं पर सूर्य-प्रकाश की क्रीड़ा मात्र है।'

यह सुनकर इन्द्र-धनुष का हृदय खंडित हो जाता है।

१९०

नदी की सतह से ऊपर उठने वाली भाप के सदृश मेरी आराधना आकाश में उठकर तेरे चरणों को छू ले।

१६१

नंगे बालक, संसार के सबसे मूल्यवान् वस्त्र भी तेरे परिधान के अयोग्य हैं।

१६२

मनुष्य अपनी नाट्यशालाओं में भगवान् के अभिनय का परिहास करता है।

१६३

गौ अपना सब दूध दुहने वाले को नहीं दे देती। वह थोड़ा-सा अपने भूखे बछड़े के लिए अपने थन में चुरा लेती है।

१६४

अपनी सुरभि का निःश्वास छोड़कर माला मुरझा जाती है।

१९५

मैं मूर्ति की पूजा नहीं करता। मैं तो मूर्ति में बैठे हुए अपने भाव का उपासक हूँ।

१९६

मेरा तर्क मेरे प्रेम पर विजय पाना चाहता है। प्रेम तर्क को घर के एक सूने कोने में जा बैठने की आज्ञा देता है।

१९७

बरगद की जड़ें मोह की भाँति, पृथ्वी से चिपटी हुई हैं।

१९८

पिंजड़े का पक्षी स्वतन्त्रता की ओर से विरक्त है।

१९९

मेरी चिरसंगिनी छाया भी अन्धकार में मेरा साथ छोड़ देती है।

२००

कुमारी के वक्षस्थल में जिस प्रकार प्रेम का विकास होता है उसी प्रकार मेरे हृदय में अपनी भक्ति का विकास होने दे ।

२०१

नीच मरुस्थल, सूर्य से उत्ताप पाकर कितना उत्तप्त हो जाता है । सूर्य जितना कष्ट नहीं देता उतना बालू का कण देता है ।

२०२

प्रेम करना ईश्वर का अनुकरण करना है ।

२०३

जिस समय चेले आपस में झगड़ते हैं उस समय उनके गुरु के संदेश के लुप्त हो जाने की आशंका रहती है ।

२०४

प्रेम वह वह्नि है जो बिना दूसरों को जलाये हुए आप जीवित नहीं रह सकती।

२०५

बालक और पशु अपने हितैषी को सहज में पहचान लेते हैं।

२०६

उद्‌गार निरर्थक हो सकता है और मौन अर्थपूर्ण।

२०७

सच्ची मूर्ति वह है जो बोलना ही चाहती है।

सच्चा उद्‌गार वह है जो सामने मूर्ति उपस्थित कर देता है।

२०८

यह पुष्प मेरे लिए विशेष मूल्यवान् है, क्योंकि हे मेरे प्रेमी, तूने अपने हाथों से इसका स्पर्श किया है।

२०९

हमें बोझ उतना असह्य नही होता जितना कि बोझ का ध्यान असह्य होता है ।

२१०

अत्याचारी का अत्याचार छाया की भाँति उसका पीछा करता है और उसे केवल मृत्यु रूपी अंधकार कवलित कर सकता है ।

२११

तलवार अपनी तीक्ष्णता का गर्व कर रही थी । शब्द ने कहा, 'बी, चुप भी रहो ।'

२१२

नन्हीं बालिका के मुख पर उसका भविष्य अंकित है । वृद्धा के मुख पर उसका अतीत काल खचित है ।

२१३

हे मेरे मित्र, अपने अनुभवों का दान देकर मुझे लज्जित न करो। मुझे पूरा मूल्य चुकाकर इन अनुभवों को प्राप्त करने की अभिलाषा है।

२१४

जीने से मरना सहज है।

२१५

मनुष्य की कला परिमित है, ईश्वर की कला अपरिमित।

२१६

प्रेमी पथिक के लिए विश्राम नहीं है।

२१७

सत्य की उपेक्षा में यातना की जड़ है।

२१८

वास्तविक दरिद्रता हृदय की दरिद्रता है।

२१९

मध्याकाल का सूर्य कृपण की भाँति अपना स्वर्ण समेटकर स्वयं अपना मुँह छिपा लेता है।

२२०

अपने भीतर ईश्वर का अनुभव करने वाला महान् है। अपने भाई के भीतर जो ईश्वर देखता है, वह महत्तर है।

२२१

प्रकृति सर्वत्र सुन्दर है।

उसकी सुन्दरता हम उसी समय देख पाते हैं जब हमारा मानस स्वच्छ रहता है।

२२२

मैं कभी-कभी यह सोचता हूँ कि जब मैं मर जाऊँगा तब मेरी समाधि बनेगी और उस पर नन्हीं-नन्हीं दूब उगेगी और वह रात्रि की निस्तब्धता में आकाश के नक्षत्रों से बातें करेगी।

२२३

किसीने एक महात्मा से पूछा, 'आपकी मृत्यु के उपरान्त, आपकी समाधि पर कौन-सा वाक्य अंकित किया जाय ?'

महात्मा ने उत्तर दिया, 'केवल इतना—मेरे अनुयायियों से सचेत रहना।'

२२४

जिसे हम अपनी अवहेलना से मार नहीं सकते उस पर हम आक्षेप करते हैं। जब हमारा आक्षेप काम नहीं करता तो हम उसकी प्रशंसा करने लग जाते हैं।

२२५

हम तीर्थस्थल के विशाल सरिता-तट पर से एक चुटकी रेणु बड़े यत्न से अपनी डिबिया में रखकर मित्रों के लिए ले आते हैं।

२२६

इतने अधूरे प्रसंगों में से किसे उठाऊँ, मैं नहीं जानता। मेरा मौन ही मेरे असमंजस को दूर कर सकता है।

२२७

हे मेरे स्वामी, मुझे ऐसी आस्था दे कि तुझे पहचानने में कभी हिचकूँ नहीं।

२२८

चाँद की आयु उसीके प्रकाश से अवश्य मापी जाती है, किन्तु चाँद की प्रत्येक कला उसके प्रेमी के लिए मोहक होती है।

२२९

इससे बड़ा दुर्दैव क्या होगा कि हम जैसे भी है उससे अधिक अच्छे समझे जाएँ ?

२३०

पुनर्मिलन के नवीन परिचय की आशा में, तुमसे बिदा होने में भी मैंने एक सुख का अनुभव किया है ।

२३१

सुदूर रहने वाला मित्र हमें धरती के विस्तार तथा उसकी विशालता का अनुभव कराता रहता है ।

२३२

भाग्य जब अत्यन्त अंधकारमय लगता है । उसी समय उसके हृदय को चीरकर न जाने कहाँ से प्रकाश की एक जीवंत रेखा सामने आ जाती है ।

२३३

संदेह को कदाचित माप सकते हैं; आस्था की माप कहाँ है ?

२३४

तुम्हारे सदेह और मेरे विश्वास के बीच क्या केवल शब्दों का हेर-फेर है ?

२३५

संदेह हमें जिज्ञासा के पथ पर आगे ले जाता है; अविश्वास सामने का रास्ता बन्द कर देता है ।

२३६

हे विदेशों की यात्रा में रमे हुए भाई, स्वदेश की उस एक चुटकी मिट्टी की रक्षा करना न भूलना, जो कि तुम्हें सौंपी गई है ।

२३७

हे समीर, मेरी त्वचा का स्पर्श करके तू एक अद्‌भुत् सिहरन उत्पन्न करता है। यह दूर तक फैली वृक्षावली क्या तेरा स्पर्श पाकर इसी प्रकार नहीं सिहर रही है ?

२३८

हे अस्ताचल के सूर्य, तुम अपनी अपरिमित स्वर्ण-राशि बिखेरकर हमें क्यों लुब्ध कर रहे हो, जब कि हम जानते हैं कि एक कृपण की भाँति इन्हें बटोरकर तुम अपने साथ ले जाने वाले हो ?

२३९

शीर्षक रचना को स्पष्ट न करें, सीमित अवश्य कर देते है।

२४०

रूप को साज की क्या आवश्यकता है ?

२४१

हम कल्पना के बूते पर विंदु में सिंधु का दर्शन कर सकते हैं ; नन्ही कलिका में विश्व का रहस्य निहित देख सकते हैं ।

२४२

मैं तेरी उस सहानुभूति का भूखा हूँ, जो अपने को शब्दों में व्यक्त नहीं कर पाती ।

२४३

हमारा खेद अपने समर्पण की अपूर्णता के कारण है ।

२४४

जो राह पाने के लिए भटका नहीं, उसे राह पाया हुआ न जानो ।

२४५

समस्या के भीतर ही उसका समाधान है ।

२४६

मौन की महिमा के बखान में उपदेशक घंटों प्रवचन करते हुए नहीं थकता है।

मौन का अभ्यास करने वाला साधु यह देखकर स्तंभित रह जाता है।

२४७

अनगढ़ पत्थर में जो मूर्तियाँ छिपी हुई हैं, उन दूसरी मूर्तियों की अपेक्षा कहीं सुन्दर है, जिन्हें कि मूर्तिकार ने स्वरूप दे दिया है।

२४८

हमारे आने वाले काम, अब तक की कृतियों की अपेक्षा कही विशाल होंगे।

२४९

हे मेरे स्वामी, मेरे मनोरथों को निःशेष न कर।

२५०

क्रोधी की उपेक्षा हो सकती है। अक्रोधी को तुष्ट रखना श्रेयस्कर है।

२५१

क्या सचमुच यह विराट् विश्व मनुष्य की साहस-पूर्ण आत्मा का प्रतिबिंब है ?

२५२

साधक अपना मौन भंग करने से क्यों डरता है ? यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर पाना शेष है।

२५३

सौंदर्य मुखड़े में देखने की वस्तु नहीं। उसे अपने संगी की भावना में देखने का प्रयत्न करो।

२५४

जिसमें आधार छोड़ देने का साहस है, वह निराधार नहीं रह सकता।

२५५

प्राणों की बाज़ी लगाकर जीवित रह जाना एक ऐसा अद्भुत अनुभव है, जिससे कायर वंचित ही रहते हैं।

२५६

भय से स्वतन्त्र होना ही स्वतन्त्रता है।

२५७

क्या कभी हम सोचते हैं कि पैसे का दुरुपयोग उस श्रम का—उस शारीरिक और मानसिक श्रम का—दुरुपयोग है, जो उस कमाई के पीछे लगा है?

२५८

एक यात्रा का अन्त ही दूसरी यात्रा का आरंभ है।

२५९

अपने बंधनों का उपयोग करके ही हम उनसे उन्मुक्त हो सकते हैं।

२६०

प्रहरी घंटा बजा रहा है।
क्या उठने की बेला हो आई ?

२६१

अपने ऐसा न बनूँ, तो फिर किसके ऐसा बनूँ ?

२६२

'मेरे प्यारे भाई, अपना मैला हाथ मेरे साफ वस्त्रों से अलग रखो।'
यह भी कैसा उपहास है !

२६३

जो मैंने पाया है, उसे लौटाने मात्र में क्या संतोष हो सकता है ? मुझे सूद भी चुकाना है, कुछ अपना देना है। और ऐसा करके ही मैं सुखी हो सकता हूँ।

२६४

जब दूसरों द्वारा की गई अपनी आलोचना मुझे भयभीत नहीं करती, तब मैं जान पाता हूँ कि पहले से अधिक बली हूँ।

२६५

स्त्री ने पुरुष से कहा, 'मैं अपने को तुझे समर्पण करके रीती हो जाना चाहती हूँ।'

पुरुष ने उत्तर दिया, 'अपने स्रोत को देख। रीती हो जाना क्या तेरे वश की बात है ?'

२६६

बादलों पर बैठे देवदूत ने कहा, 'झुककर धरती की ओर देखने में मुझे भय लगता है।'

२६७

यह खेद की बात है कि हम उपालंभ के अधिकार को आज अपनी स्वतन्त्रता का प्रतीक मान बैठे हैं।

२६८

फूल अपनी सुगंधि इसलिए नहीं बिखेरता कि ऐसा करने से उसे कुछ पाना है।

२६९

कवि कहता है:, 'मैं तो केवल बीज बिखेरता हूँ। मुझे इसकी चिंता नहीं कि कौन इनमें से अपनी जड़ें धरती में फेंक सकेंगे।'

२७०

हमें संकल्प करने में सुख मिलता है; वह चाहे टूटतेर हें।

२७१

जो मैं बनना चाहता था और नहीं बन सका उसका ध्यान भी हमें संतोष देता है।

२७२

जिसे तुम पतिता कहते हो, उसका त्याग तो देखो। उसने तिल-तिल करके अपने को मिटाया है—मनुष्य की पाशविकता के शमन के लिए।

२७३

अपने विनिंदक के अस्तित्व को भुला सकना उसके विरुद्ध तुम्हारा सबसे प्रबल प्रतीकार है।

२७४

हृदय की भाषा शब्दों की भाषा से भिन्न होती है। जब दो व्यक्तियों के बीच हृदय की भाषा स्थापित हो जाय तो किसी अन्य माध्यम की आवश्यकता नहीं रह जाती।

२७५

कल की कही अपनी ही बातें आज मुझे दूरालाप-सी क्यों प्रतीत होती है ?

२७६

मुझे अपनी थकान प्रिय है। उसीमें तो नई स्फूर्ति के बीज हैं।

२७७

बच्चों के घर-घरौंदे देखकर हम मुसकाते हैं। हमारे घर-घरौंदों को देखकर भी कोई मुसकाता होगा।

२७८

हर नया प्रभात एक नये युग का पूर्वज है।
हर नया युग एक नये कवि का सतत प्रतीक्षी।

२७९

इन ढूहों के नीचे, कहते हैं, एक सारा नगर दबा हुआ है। कभी यहाँ जन-कोलाहल था। बच्चे किल-कारियाँ भरते थे; प्रमदाएँ अपने प्रेमियों से सैन द्वारा बातें करती थीं, वृद्ध अपने बीते दिनों का बखान करते थे। कलाकार अलंकरण गढ़ते थे। व्यापारी माल लादते थे, पुरोहित पूजाएँ सजाते थे।

और मैं अपने संग्रह के लिए कुछ अवशेष बटोरने आया हूँ।

२८०

मैं तो काल के लिए न ठहरा, लेकिन काल ने मुझे साथ ले चलने के लिए ठहरने की कृपा की।

२८१

घायल पंख वाले पक्षी की उड़ान देखी है ? अपनी यात्रा को कुछ ऐसा ही पा रहा हूँ।

२८२

बादलों के खेल देख रहा हूँ। एक बादल दूसरे को पकड़ने के लिए भागता हुआ अपने को बिखरा देता है।

२८३

सौंदर्य जीवन से कहता है, 'तेरे बिना मेरा अस्तित्व भी कैसे हो सकता है ?'

जीवन उत्तर देता है, 'तेरे बिना मैं अपना कोई प्रयोजन नहीं देख पाता।'

२८४

तुझे जानना तुझ पर मुग्ध होना है।

२८५

हे प्रभु, मुझे सुखद प्रकाश दे। पूर्ण प्रकाश तो मुझे अंधा कर देगा।

२८६

मैं जानता हूँ कि तेरी दृष्टि में कुछ भी असुन्दर नहीं।

२८७

कुरूपता का बोध तो इंद्रियस्थ को होता है—अतीन्द्रिय को नहीं।

२८८

जो कविता गद्य से पलायन नहीं है, वही सच्ची कविता है।

हाँ, गद्य की अपनी विशेष मर्यादा है।

२८९

कविता में कचरे के चित्रण के लिए वैसे ही स्थान होना चाहिए जैसे कि सुन्दर फूल के चित्रण के लिए।

२९०

तेरा नाम जानने की इच्छा रखने वाला केवल कुतूहल से प्रेरित है, प्रेम से नहीं।

२९१

दूर पर, तरुण वृक्षों की पंक्ति सूर्यास्त के आकाश की पृष्ठभूमि में, छोटे-बड़े पाग पहने उस यात्री दल-सी लग रही है, जो विश्राम लेने के लिए क्षण भर ठहर गया हो।

२९२

मेरी त्रुटियों को भूल जाने की तेरी करुणा मेरे हृदय को क्यों बेधती रहती है ?

२९३

भयानक हैं वह लोग जिनमें दुर्बलताएँ नहीं होतीं। उनसे हमारा वश नहीं चलता।

२९४

जब प्रत्येक व्यक्ति को मैं सन्देह की दृष्टि से देखने लगूं तब जानना कि मुझे बुढ़ापे ने अच्छी तरह घेर लिया है।

२९५

हमारी बुद्धि पर पड़ा हुआ पर्दा भी क्या हमारी रक्षा के लिए नहीं है ?

२९६

बंधन ही मुक्ति का साधन है।

२९७

सबसे अच्छी प्रेम-कथा वह है जिसमें प्रणय-निवेदन के दो वाक्य लिखना भी बचाया गया हो।

२९८

कभी कभी सोचता हूँ कि सुख भोगना दुख भोगने की अपेक्षा क्या कठिनतर नहीं ।

२९९

मेरी मान्यताएँ सब तर्क पर आधारित नहीं हैं। इसलिए तर्क में परास्त होने पर भी मैं उन्हे ग्रहण किए रहने पर विवश हूँ ।

३००

शंकाशील हृदय के बोझ से भारी बोझ क्या हो सकता है ?

३०१

अपने अस्तित्व के भीतर एक नए अस्तित्व का सृजन करने वाली शक्ति को कविता का नाम न दूं तो उसे किस नाम से बताऊँ ?

३०२

भौतिक बन्धनों के अभिशाप से मुक्ति दिलाने वाली प्रेरक शक्ति का नाम ही तो कविता है।

३०३

प्रत्येक युग के अपने नए अनुभव होते है; प्रत्येक अनुभव अपनी नई अभिव्यक्ति चाहता है।

३०४

मैं अपना यात्रा का ध्येय नहीं जानता; केवल चलता जाता हूँ। न चलना भी तो सम्भव नहीं।

३०५

आने वाले कल की चिन्ता में पिसने वाले मनुष्य, तुमने क्या अपने आज के धंधों को ठीक-ठीक सँभाल लिया है ?

३०६

ऊँचे आदर्श केवल उनको आकर्षित करते हैं जिन्हें आत्मोन्मुख होने का साहस नही होता ।

३०७

आत्मज्ञानी को आदर्शों की आवश्यकता नहीं रह जाती ।

३०८

क्या हमने कभी यह समझने का प्रयत्न किया है कि नवीन ही सनातन है ?

३०९

अपने को पहचान लेने के अनंतर हमें क्या पहचानना शेष होगा ?

३१०

सत्य तो सनातन है किन्तु उसकी प्रत्येक अभिव्यक्ति हमारे लिए एक नूतनता रखती है ।

३११

सत्य की खोज पूर्वाग्रहों को सर्वथा त्याग कर ही हो सकती है ।

३१२

हम अपने बोध को व्यक्त करने के प्रयत्न में केवल उसका परिसीमन करते हैं ।

३१३

यदि उसकी अनुभूति भलाई में हमारी आस्था को दृढ़तर नहीं करती तो उसे सौंदर्य का नाम हम दे भी तो कैसे ?

३१४

हम आज, इस क्षण की चिन्ता कर सके तो भविष्य अपनी चिन्ता अपने आप कर लेगा ।

३१५

प्रकृति हमसे अपनी सामर्थ्य से अधिक करने की अपेक्षा नहीं करती, लेकिन सामर्थ्य से कम करने पर हमें क्षमा भी नही करती ।

३१६

कल का काम हम आज क्यों करें ? आज का हमारा धंधा क्या हमारे लिए पर्याप्त नही ।

३१७

यह केवल अर्द्ध सत्य है कि मेरा दुःख मेरी निर्धनता के कारण है ।

३१८

कवि जब अपने को दुहरावे तो वह स्रष्टा नहीं रह जाता; किन्तु उसका अपने को दुहराना उस पद-टेक की भाँति है, जो उसे अगले पग के लिए तैयार करता है ।

३१९

बिजली और गरज मेघ की बरसने की आतुरता को ही प्रगट करते हैं ।

३२०

सत्य को स्वीकार करने वाला कभी निराशावादी नहीं हो सकता ।

३२१

जन्म उतना ही शुभ अथवा अशुभ है जितनी कि मृत्यु । शुभाशुभ के द्वैध से अपनी रक्षा कर सकने वाला ही अपनी रक्षा कर सकता है ।

३२२

जिसने बंधन स्वीकार नहीं किया उसकी मोक्ष की कामना व्यर्थ है ।

३२३

बादल रीते कहाँ है ?
उन्हें लहलहाते खेतों में देखने वाली दृष्टि चाहिए।

३२४

इस मौन निस्तब्धता में कितने स्वरों की परिणति हुई है; कितने स्वरों के उत्थान की सम्भावनाएँ निहित हैं।

३२५

मूर्ख विश्वासी होता है, पंडित अविश्वासी। ज्ञानी पुनः विश्वासवान् होता है—यद्यपि मूर्ख और ज्ञानी के विश्वासों में अन्तर होता है।

३२६

सबसे बड़ी विजय तो यह है कि विपक्षी अपने को पराजित न अनुभव करे।

३२७

मृत्यु से पूर्व विश्राम का क्या अर्थ है ?

३२८

अपना हित न पहचानने वाला विनाशोन्मुख है। केवल अपना हित जानने वाला भी विनाशोन्मुख है। विवेकी अपने हित को परहित से अभिन्न मानता हुआ ही आचरण करता है।

३२९

स्वार्थ के लिए मत बदलने वाला अवसरवादी है। सत्यशोधी के लिए मत बदलने में क्या बाधा है ?

३३०

भयभीत होने पर मैं सदा हँसने का प्रयत्न करता हूँ।

३३१

मुझे अपने अपराधों पर नित्य थोड़ा-थोड़ा खेद प्रकट कर लेने दो। ऐसा न हो कि एक साथ आगे चलकर उनका भार मेरे लिए असह्य हो उठे।

३३२

सीपी के भीतर पहुँचे हुए वालुका-कण से उपजी कसक जिस प्रकार मोती की सृष्टि करती है, उसी प्रकार मानवीय हृदय की कसक ऐसे आलोक की सृष्टि कर सकती है जो जग को मोहित कर ले।

३३३

क्या हमारा कला-प्रेम अपने जीवन से पलायन का एक साधनमात्र है ?

३३४

हम अपने को भूलने के प्रयत्न में सुरा का सेवन कर सकते हैं, कला के पीछे जा सकते हैं, या कीर्तन में भी रत हो सकते हैं।

३३५

संशय पर विजय पाए बिना सर्जना कहाँ सम्भव हो सकती है ?

३३६

जीवन से विलग होकर कला अपना अस्तित्व कैसे बनाए रह सकती है ?

३३७

पत्थर में हो चाहे लकीरों और रंगों में, प्राण फूंकने के लिए हमें जीवन के तत्व की पहचान करनी पड़ती है।

३३८

प्रेरणा मनुष्य की पात्रता पर आधारित है, उसके प्रयत्नों पर कदापि नहीं।

३३९

अहं को महत्व देना संघर्ष का आवाहन करना है।

३४०

सच्चा कलाकार वह है जिसने आकांक्षाओं पर विजय पा ली है, जो उनसे परे है।

३४१

सफलता के उपासक केवल अपनी बुद्धिहीनता का परिचय देते हैं।

३४२

हृदय में प्रेम हो तो उसे प्रकट करने के लिए अक्षर अपने आप जुड़ जाते है।

३४३

राग और प्रेम के अंतर को समझना आवश्यक है। सौंदर्य अपने पट रागियों के लिए नहीं खोलता, केवल प्रेमियों के लिए खोलता है।

३४४

धन और शक्ति का हमारा दिखावा अपनी आंतरिक दरिद्रता और दुर्बलता को ढाँकने के लिए ही है।

३४५

हमारी संग्रह-वृत्ति हृदय के छूँछेपन के कारण है। वह एक भयजनित रोग से इतर कुछ भी नहीं है।

३४६

वर्षा भी सुन्दर है और तपन भी।

वारिद भी सुन्दर है और नीलाकाश भी।

३४७

रसिक-हृदय सौदर्य से परितृप्त नही होता।

परितृप्ति निरीक्षक की सीमा बताती है, सौदर्य की नहीं।

३४८

पिंगल का ज्ञान अच्छा है, किंतु यह जान लेना कम आवश्यक नहीं कि कविता पिंगल से बँधी नहीं है।

३४९

गुरु के बिना हम अपने को भटका हुआ अनुभव करते हैं, किंतु भटकने से भय खाने वाला व्यक्ति क्या सचमुच खोजी है ?

३५०

अपने आप को खोए बिना किसने सौंदर्य को पहचाना है—उस सौंदर्य को जो सत्य भी है और शिव भी ?

३५१

संगीत, मुसकान, मौन—तीनों ही सर्जनात्मक हो सकते हैं।

३५२

हम किसी वस्तु का विरोध करके उसे केवल जीवन प्रदान करते हैं।

३५३

विनम्रता भली; विनम्र बनने का प्रयास भला नहीं

३५४

मेरा आशय शब्दों के बंधन में नहीं आता और मेरे शब्दों का आशय लोग अलग-अलग ग्रहण करते हैं। बोलो, अपना वास्तविक आशय किसीको कैसे समझाऊँ ?

३५५

मेरा यह कहना कि, "मैं तुम से रुष्ट हूँ" मेरे उपालंभ की केवल एक मीठी भूमिका है।

३५६

सुविधाओं की वृद्धि परिवर्तन अवश्य ले आती है, किंतु प्रत्येक परिवर्तन को उन्नति का सूचक नहीं माना जा सकता।

३५७

कल की चिंता में डूबना हमारा आज की समस्याओं से पलायन मात्र है।

३५८

कारावास को सजाकर बन्दी अपने बन्धन की यातना को भुलाना चाहे तो उसके कार्य को हम क्या कहेंगे ?

३५९

हम अपनी त्रुटियों का निवेदन इस प्रकार करते हैं कि दूसरे केवल उसे हमारी विनम्रता समझें।

३६०

मिली वस्तु को परखने की इच्छा रखने वाला ही तो सच्चा खोजी है। वही जानता है कि प्रत्येक प्राप्ति में एक नया रस, नया आनन्द है।

३६१

अहेरी कहीं बँधे हुए मृग का शिकार करता है ?

३६२

हृदय को टूक-टूक किए बिना स्नेह कैसे बाँटा जा सकता है ?

क्या इसी भय से मनुष्य अपना स्नेह किसी एक को ही देना चाहता है।

३६३

कली-कली के संपुट में वसन्त छिपा है; प्रत्येक नन्ही आत्मा में सौंदर्यमय जीवन का रहस्य-बोध है।

३६४

थके बटोही को अपनी शीतल छाया से सुख पहुँचाने वाला घना वृक्ष अपने किए हुए उपकार के प्रति सचेतन हो जाय तो उस उपकार की महिमा घट जायगी।

३६५

हम अतीत को अपने युग के प्रकाश में ही देख पाते हैं, और इसीमें अतीत की नित-नूतनता है।

३६६

इस सीधी नई सड़क ने रास्ता अवश्य छोटा कर दिया है, लेकिन यात्रा का जो सुख मार्ग के मोड़ों में है वह यहाँ कहाँ ?

३६७

बार-बार मोड़ लेने वाली यह स्रोतस्विनी मानो अपने उद्गम से दूर जाने वाले पथ पर नववधू की भाँति विलम रही है।

३६८

नदी पर छाए हुए कुहासे को पान करने के लिए सूर्य अपनी कोटि-कोटि किरनें धरती पर भेज रहा है।

३६९

नदी के बीच बनने-बिगड़ने वाले यह रेतीले नन्हे द्वीप सचमुच सुनसान जान पड़ते हैं। यहाँ बालकों की टोलियाँ आकर कभी अपने खेल नहीं रचतीं और न यहाँ वह बालू के किले बनते हैं, जो सूर्यास्त से पहले मिटा दिए जाते हैं।

३७०

चहारदिवारी के फाटक के दो ओर की दुनिया का अन्तर जैसा कैदी जानता है, बाहर रहने वाला नहीं जान पाता।

३७१

उस बच्चे को हमारे प्यार की और अधिक आवश्यकता है, जिसका चेहरा आज उदास है।

३७२

फूल सबसे सुन्दर अपने वृन्त पर लगते हैं।

३७३

देने वाले को किसने ठगा है ? ठगा तो वह जाता है जो बदले में कुछ पाने का इच्छुक है।

३७४

हम प्रार्थना तो करते हैं लेकिन हृदय में यह भय लेकर कि हमारी प्रार्थना स्वीकार न हो जाय।

३७५

ढलती हुई सन्ध्या को ढलने से कौन रोक सकता है, किन्तु जिसने सूर्यास्त की अरुणिमा से अपनी आँखों को भर लिया है, उसके लिए काली निशा में भी आश्वासन है।

●